International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
ISSN: 2455-2070
Received: 10-04-2026, Accepted: 11-05-2026, Published: 26-05-2026
Volume 12, Issue 2, 2026, Page No. 250-251

पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं के समक्ष समस्याएँ एवं प्रभाव

सुनिता चौधरी
शोधार्थी, लोक प्रशासन विभाग, महात्मा ज्योतिराव फूले, विश्वविद्यालय जयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश
पंचायती राज व्यवस्था ने ग्रामीण राजनीति में परिवर्तन किया। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के तहत पंचायती राज एवं नगरीय निकायों में प्रत्येक स्तर पर कुल सीटों का कम से कम एक तिहाई महिलाओं के लिए आरक्षित हुए। पंचायती राज प्रणाली का मुख्य परिणाम सामाजिक परिवर्तन के रूप में सामने आया है और इसने बाल–विवाह, जुऐं की प्रवृत्ति और नशे की लत जैसी सामाजिक बुराइयों में कमी लाने में मदद की है। पंचायती राज के माध्यम से ग्राम समाज का सशक्तिकरण हुआ है। इससे महिला साक्षरता स्तर में वृद्धि हुई है और घरेलू हिंसा की घटनाओं में कमी आई है।

मूल शब्द: हिलाऐं, पंचायतीराज, सशक्तीकरण, समस्याऐं प्रभाव

प्रस्तावना

महिलाएं देश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा है, लेकिन उनका राजनीतिक प्रतिनिधित्व एवं भागीदारी निश्चित रूप से काफी कम है। किसी भी लोकतांत्रिक प्रणाली में समाज के आधे भाग की अल्प भूमिका से ऐसी प्रणाली के लोकतांत्रिक होने पर सवालिया निशान लगना स्वाभाविक है। भारत जैसे समाजवादी राष्ट्र में यह और भी आवश्यक है कि समाज के सभी वर्गों को विकास की प्रक्रिया में समाहित किया जाए। इस दृष्टिकोण का समर्थन वर्ष 1959 में बलवंतराय मेहता आयोग की रिपोर्ट में भी किया गया कि एक देश की महिलाओं को विकास की प्रक्रिया में भागीदार बनाए बिना कोई वास्तविक प्रगति नहीं हो सकती है। साथ ही, वर्ष 1974 में भारत में महिलाओं की स्थिति पर आयोग ने महिला पंचायतों के गठन का सुझाव दिया। इसके अतिरिक्तवर्ष 1978 में अशोक मेहता आयोग की रिपोर्ट ने भी व्यापक स्तर पर महिलाओं को पंचायतों में शामिल करने की सिफारिश की। भारतीय समाज में प्रचलित लैंगिक पूर्वाग्रह के कारण महिलाओं की सार्वजनिक कार्यों में हिस्सेदारी शून्य ही रहती है। इस पूर्वाग्रह का आधार जैविक निर्धारणवाद है, जो पृथ्वी की श्रेष्ठता पर आधारित है लेकिन, आधुनिक युग में महिलाओं द्वारा किए गए कार्यों से योग्यता व क्षमताओं में भिन्नता करना दुर्भाग्यपूर्ण है, क्योंकि इससे समाज के अर्धांश की क्षमताओं का पूर्ण लाभ राष्ट्र को नहीं मिल पा रहा है। साथ ही, यह भी उल्लेखनीय है कि पंचायत स्तर पर प्रोत्साहन देने से राज्य व राष्ट्रीय स्तरों पर समग्र समावेश संभव है क्योंकि पंचायत स्तर लोकतंत्र की आरंभिक पाठशाला है। गौरतलब है कि राजनीतिक भागीदारी सामाजिक–आर्थिक आत्मनिर्भरता को भी संबल प्रदान करेगी। अक्सर यह तर्क दिया जाता है कि महिलाओं का राजनीतिक नेतृत्व एक अधिक सहकारी एवं कम संघर्ष की आशंका वाली दुनिया बनाएगा। इस तर्क का आधार स्त्री चरित्र है, जिसमें सहिष्णुता, विनम्रता और शांतिप्रियता समाहित है। साथ ही, पानी की कमी, पर्यावरण संरक्षण, शिक्षा और नशे का कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों में से है, जिन्हें महिलाओं ने अपेक्षाकृत प्रभावी रूप से निपटाया है। यह भी उल्लेखनीय है कि महिलाओं के राजनीतिक समावेशन से श्रम का लैंगिक विभाजन कमजोर होगा और महिलाएं सार्वजनिक कार्यों में सहभागी हो सकेंगी। इस प्रकार स्थानीय प्रशासन की संस्थाओं से एक तरफ महिला सशक्तीकरण होगा, वहीं समाज के सभी वर्गों की भागीदारी से राष्ट्र भी तीव्र, सतत् व समावेशी विकास के लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगा।

वास्तविक क्रियान्वयन में चुनौतियां

73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के तहत अनुच्छेद 243 (डी) और 243 (टी) जोड़े गए, जिसमें क्रमशः पंचायती राज एवं नगरीय निकायों में प्रत्येक स्तर पर कुल सीटों का कम से कम एक तिहाई महिलाओं के लिए आरक्षित है। इस प्रकार महिलाओं के लिए भागीदारी का एक मंच तैयार हुआ। यह निःसंदेह महिला सशक्तीकरण की दिशा में किया गया एक ईमानदार प्रयास है। इसके संदर्भ में कहा गया कि यह प्रावधान घूंघट में छिपी आधी आबादी की पूरी दुनिया ही बदल देगा। लेकिन इसके समक्ष व्यापक चुनौतियों हैं, क्योंकि इस पहल ने महिलाओं को कलम तो थमा दी लेकिन लिखना नहीं आता है। भारतीय समाज पितृसत्तात्मकता में विश्वास रखता है, जो जैविक निर्धारणवाद पर आधारित है। जैविक निर्धारणवाद के अनुसार उच्चतर–1 – निम्नतर का निर्धारण प्राकृतिक रूप से हो जाता है और कुछ समूह जन्म से ही दूसरों की अपेक्षा उच्चतर व बेहतर होते हैं। यह विचारधारा श्रम के लिंग आधारित विभाजन के लिए उत्तरदायी है। श्रम का लिंग आधारित विभाजन सार्वजनिक और निजी कार्यों में अंतर करता है। साथ ही, सार्वजनिक कार्यों के लिए पुरुषों को और निजी कार्यो (घरेलू कार्यों) के लिए महिलाओं को उत्तरदायी बनाता है। इन निजी कार्यों के कारण महिलाऐं सार्वजनिक क्षेत्र में भागीदारी नहीं हो पाती हैं। इसके अतिरिक्त भारत की ऐतिहासिक सामंतवादी मानसिकता भी उपाश्रित वर्गों की सहभागिता में बाधक है।

भारत में परंपरागत रूप से पर्दाप्रथा प्रचलित रही है, जो ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी बरकरार है। हालांकि आरक्षण प्रणाली के कारण महिलाऐं चुनावों में उम्मीदवारी जरूर करती हैं, लेकिन प्रायः यह महिला उम्मीदवार न वोट मांगती है और न ही राजनीतिक मंचों पर नेतृत्व के लिए सामने आती है क्योंकि यह सार्वजनिक कार्य है, जिसका जिम्मा परंपराओं ने पुरुषों को सौंपा है। साथ ही, यह भी पुरुष ही निर्धारित करते हैं कि परिवार की महिलाऐं किसको वोट देंगी। इसके अतिरिक्त निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों की निर्णय लेने की शक्ति का प्रयोग भी पुरुषों द्वारा ही किया जाता है। इस प्रकार सरपंचपति की अवधारणा के कारण निर्वाचित महिला प्रतिनिधि एक हस्ताक्षर मशीन में रूपांतरित हो जाती है। दूसरी तरफ, अशिक्षा, जागरूकता एवं आर्थिक स्थिति का न्यून स्तर भी महिलाओं के समावेशन में बाधक है। गौरतलब है कि जनसहभागिता की इमारत का वजूद जागरूकता रूपी नींव पर टिका होता है। लेकिन अब सवाल यह उठता है कि किस प्रकार की जागरूकता वास्तविक जन भागीदारी को प्रेरित करेगी? इस

संबंध में गांधीदर्शन वास्तविकता के ज्यादा निकट प्रतीत होता है कि हाशिए पर छूटे व्यक्तियों से राजनीतिक जागरूकता की उम्मीद करने से पूर्व गरीब के पेट के लिए रोटी की पूर्ति करना बुनियादी शर्त है। इस प्रकार, राजनीतिक जागरूकता को आर्थिक जागरूकता गति प्रदान करती है। दूसरी तरफ, सामाजिक–सांस्कृतिक जागरूकता भी इस संबंध में अपना एक अलग महत्व रखती है।

यह एक तरफ राजनीति में समावेशीकरण को बढ़ावा देती है, वही वर्ग और वर्ण की विभेदकारी व्यवस्था का निषेध भी करती है। अतः महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी और सशक्तीकरण के मुद्दे को मात्र राजनीतिक अधिकारों तक सीमित नहीं किया जा सकता है। विगत वर्षों में, महिला सशक्तीकरण की प्रक्रिया से पंचायतों में महिलाएं प्रभावी भूमिका निभा रही हैं। वर्तमान सृजनशील समाज में नारीवादियों द्वारा आत्मनिर्णय एवं स्वशासन के लिए सामाजिक रूपांतरण की मांग प्रबल हुई है। इसकी अभिव्यक्ति भारतीय संसद में 110 वें व 112वें संविधान संशोधन विधेयक, 2009 के रूप में हुई, जिनका संबंध क्रमशः पंचायतीराज और शहरी निकाय के सभी स्तरों में महिलाओं के लिए निर्धारित 33 प्रतिशत सीटों को बढ़ाकर 50 प्रतिशत करने से था। हालांकि दोनों विधेयक 15वीं लोकसभा विघटन के साथ समाप्त हो गए। इसके बावजूद बिहार, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, राजस्थान और केरल जैसे राज्यों ने स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं में महिलाओं के 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित किया है, जो महिला सशक्तीकरण की दिशा में अनुकरणीय पहल है। हालांकि पंचायतों में महिलाओं की व्यावहारिक भूमिका में परिवर्तन स्पष्टतः परिलक्षित होता है, जिसकी अभिव्यक्ति सभी स्तर की पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की 36.84 प्रतिशत भूमिका के रूप में परिलक्षित होती है। इसमें सरकार सकारात्मक परिवर्तन के लिए निरंतर प्रयासरत है, लेकिन मात्र वैधानिक प्रयास पर्याप्त नहीं है। पंचायती राज में महिला भागीदारी के प्रभाव पंचायती राज प्रणाली का मुख्य परिणाम सामाजिक परिवर्तन के रूप में सामने आया है और इसने बाल–विवाह, जुऐं की प्रवृत्ति और नशे की लत जैसी सामाजिक बुराइयों में कमी लाने में मदद की है। पंचायती राज के माध्यम से ग्राम समाज का सशक्तिकरण हुआ है। इससे महिला साक्षरता स्तर में वृद्धि हुई है और घरेलू हिंसा की घटनाओं में कमी आई है। अधिकांश पंचायतों की प्राथमिकता रही है कि ज्यादा से ज्यादा संख्या में बच्चे और विशेष रूप से बालिकाएँ स्कूल जाऐं। पंचायत के निर्वाचित प्रतिनिधियों ने जिन प्रमुख विकासात्मक मुद्दों को आगे बढ़ाया है उनमें शुद्ध पेयजल की आपूर्ति, स्थानीय सड़क निर्माण और स्वच्छता जैसे विषय शामिल हैं। बड़ी संख्या में निर्वाचित महिला पंचायत प्रतिनिधि, महिलाओं और बच्चों तथा साफ–सफाई से जुड़े मुद्दों को उठा रही हैं। इतना ही नहीं, वे सड़कों पर रोशनी की व्यवस्था और बस शेल्टरों के निर्माण जैसे कार्यों के लिए भी गंभीर प्रयास कर रही हैं। विकासात्मक पहलों में महिलाओं की भागीदारी, पंचायती राज प्रणाली का अभिन्न अंग बन चुकी है। हालांकि, स्थानीय शासन प्रणाली में महिलाओं को अभी कई चुनौतियों से निपटना पड़ रहा है, लेकिन ग्रामीण महिलाओं में संवैधानिक प्रावधानों, सरकारी नीतियों, सामाजिक गतिविधियों और अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है और अब वे राजनीतिक सत्ता और निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी कर रही हैं। पंचायती राज संस्थाओं में उनका योगदान बड़े पैमाने पर बढ़ा है। अब वे पंचायती राज संस्थाओं में अपनी भागीदारी के माध्यम से गांव बढ़ेगा तो देश बढ़ेगा का नारा का बुलन्द करते हुए ग्रामीण विकास के क्षेत्र में परचम लहरा रही हैं। गांवों को खुले में शौच मुक्त बनाने में पंचायती राज संस्थाओं और विशेष रूप से महिला सरपंचों की भूमिका अग्रणी रही है।

संदर्भ सूची

1. जी. एस. मेहता, 'पंचायती राज व्यवस्था: महिलाओं की उभरती भूमिका' व्यवहारिक शोध एवं विकास संस्थान, विकास परिचर्चा, जुलाई 17, 1997.
2. प्रशांत पाण्डे, 'पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी', योजना, जुलाई 1999, पृ. 19.
3. राजमणी त्रिपाठी एवं सुनीता सिंह, 'पंचायतों के नेतृत्व में कमजोर वर्गों की जागरूकता, कुरुक्षेत्र, फरवरी, 2000, पृ. 10–14.
4. सदानंद सिंह, 'भारतीय राजनीति में महिलाओं का योगदान', विधायनिकी, मध्यप्रदेश विधानसभा सचिवालय की त्रैमासिक शोध पत्रिका, जून 2001.
5. सुशीला कौशिक, 'भारत में पंचायती राज में महिलाओं की सहभागिता', राष्ट्रीय महिला आयोग, 2001
6. लक्ष्मी रानी, 'पंचायती राज और महिलाएँ', 2001.
7. भारत डोगरा, 'सार्थक है महिलाओं का आरक्षण' कुरुक्षेत्र, जुलाई, 2016, पृ. 11.
8. सुब्रहमण्यम अनन्या लक्ष्मी, 'पॉलिटिक्स एम्पॉवरमेंट ऑफ वुमैन' विवास पनोरमा प्रकाशन, दिल्ली, 2003.
9. नरेन्द्र कुमार सिंघी, 'नारी सशक्तीकरण', विमर्श एवं यथार्थ, संपादक आशा कौशिक, पृ. 3, 2004
10. पंचायती राज संस्थान, भारत सरकार।